ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 326-329
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

डॉ0 भीमराव आम्बेडकर का अस्पृश्यता पर आघात

जगदीश कुमार
असि0 प्रोफेसर– शिक्षाशास्त्र विभाग, श्री रामेश्वरदास अग्रवाल कन्या पी.जी. कॉलेज, हाथरस (उ0प्र0), भारत

Received- 11.11.2018, Revised- 15.11.2018, Accepted - 19.11.2018 E-mail: aaryvart2013@gmail.com

सारांश : ***प्राचीन काल से ही अस्पृश्यता जैसी समस्या दिखाई देती है। जिसके कारण अनेक लोगों के साथ अमानवीय व्यवहार हुए हैं। इस संम्बध में डॉ0 अम्बेडकर ने गहनता से अध्ययन किया। उन्होंने शूद्रों की उत्पत्ति के बारे में विस्तार से बताया। डा0 अम्बेडकर ने न्याय और उपयुक्तता की कसौटी पर हिन्दू धर्म का कसकर मूल्यांकन किया। किसी भी धर्म के बारे में उन्होंने बताया कि व्यक्ति में समुचित गुणों का विकास करना ही किसी भी धर्म की उद्देश्य होना चाहिए। डॉ0 अम्बेडकर बौद्ध धर्म की ओर आकृष्ट हुए। डा0 अम्बेडकर के विचारों का केन्द्रबिन्दु सामाजिक समानता रही है। वे शोषण और असमानता के विरोधी थे। वे समाज में ऐसी सामाजिक व्यवस्था के हिमायती थे जहाँ स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व जैसे मूल्य हों।***

कुंजीभूत शब्द– कसौटी, कालजयी, सुखद अनुभूतियों, सुकोमल, बदकिस्मती, त्रिकोण, सपाट, मनोविज्ञान।

अस्पृश्यता प्राचीन काल से ही एक गंभीर समस्या रही है क्योंकि प्राचीन काल से अस्पृश्य लोग प्रभुत्वशाली अभिजन वर्ग द्वारा शोषित होते रहे। भारतीय समाज अनेक वर्गों में विभाजित है इस विभाजन को आर्थिक–सामाजिक कारकों ने और अधिक बढ़ावा दिया। निसंदेह यह कहा जा सकता है कि छोटे–बड़े ऊँच–नीच का विभाजन भारत में प्राचीन काल से ही चला आ रहा है। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के मानवशास्त्र विभाग द्वारा आयोजित एक संगोष्ठी में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर द्वारा जो आलेख पढ़ा गया उसका शीर्षक था– भारतीय जाति, उत्पत्ति, विकास और कार्यपद्धति, जो कि एक ग्रंथ के रूप में बाद में प्रकाशित हुआ। दूसरा स्रोत्र जात–पात तोडक मण्डल के द्वारा आयोजित व्याख्यानमाला में दिया गया। ये दो महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिनसे डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के सामाजिक विचारों के बारे में पता चलता है। इसके अलावा शूद्र कौन थे ये एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है। जिसमें बताया गया है। कि शूद्रों की उत्पत्ति कैसे हुई, अस्पृश्य कैसे बने ?[1] उन्होंने भारतीय समाज के बारे में कहा कि भारतीय समाज आर्य, द्रविड़, सीथियन, जैसे समिश्रण से बना है इसी कारण भारतीय सामाजिक व्यवस्था का विष्लेशण अत्यंत जटिल है।[2] इसी ग्रंथ में एक और भारतीय सामाजिक सिद्वान्त के बारे में बताया कि व्यक्तियों के समूह से समाज का निर्माण होता है। यह बहुत ही सामान्य बात है। इस बात का उन्होंने खण्डन किया और कहा कि समाज का निर्माण कभी भी व्यक्ति से नहीं होता बल्कि उसका निर्माण वर्ग से होता है। प्रत्येक समाज में वर्ग पाए जाते है और वर्ग निर्माण में अनेक अलग–अलग कारकों की भूमिका होती है जैसे– राजनीतिक, आर्थिक, बौद्विक कारक। व्यक्ति किसी न किसी की इकाई बनकर ही जीना चाहता है। यह एक वैश्विक परिदृश्य है। हिन्दू समाज भी इस परिदृश्य से पृथक नहीं है। इस प्रकार वर्ग जाति में बदलते चले गए। यह वास्तविकता है कि वर्ग और जाति के बहुत मामूली अन्तर के कारण इनका आस्तित्व अलग–अलग लगता है। वस्तुतः जाति एक स्वयं मर्यादित वर्ग है।[3]

किसी वस्तु, व्यवस्था और विचारधारा की उत्कृष्टता और निकृष्टता के बारे में पता लगाने के लिए दूसरी वस्तु व्यवस्था और विचारधारा का होना आवष्यक होता है। डॉ0 अम्बेडकर भारत से बाहर जाकर अध्ययन करके आये थे अतः उनकी सोच अत्यधिक वृहद थी। जब उन्होंने भारतीय समाज, संस्कृति, साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन यूरोपीय समाज, संस्कृति, साहित्य से किया। इस तुलनात्मक अध्ययन के निष्कर्ष में डॉ0 भीमराव अम्बेडकर को भारतीय जाति व्यवस्था अमानवीय एवं अमानुषिक लगी। डॉ0 अम्बेडकर द्वारा कोलम्बिया विश्वविद्यालय में पढ़े गए अपने शोध में भारत की जाति व्यवस्था और विकास विषय पर जाति व्यवस्था की ठोस व्याख्या की। इसके बाद उन्होंने पत्रकारिता जब प्रारम्भ की तो मूकनायक में जाति व्यवस्था की समस्याओं को प्रमुखता के साथ उठाया। जाति व्यवस्था के बाद ही उन्होंने स्वतंत्रता क्या है? स्वतंत्रता कैसे हो ? स्वतंत्रता किसके लिए हो ? जैसे प्रश्नों का गंभीरता से हल खोजा।

जाति जैसी समस्या पर अनेक पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं जिनमें से शायद ही किसी पुस्तक को पूर्ण पुस्तक कहा जा सके। डॉ0 अम्बेडकर ने इस प्रश्न को गंभीरता से उठाया क्योंकि वे जाति व्यवस्था के क्या दुष्प्रभाव हैं उन्हें भली–भाँति जानते थे। उनके अनुसार जाति व्यवस्था ही अनेक सामाजिक भेदभाव की जननी है।

सिकन्दर के आक्रमण के समय भारत की अनेक जातियों ने उससे संघर्ष किया। डॉ0 अम्बेडकर ने कई जातियों के उदाहरण इतिहासकारों के माध्यम से पेश किए हैं

जिनमें से एक जाति थी सोदरिया। इतिहासकार लैसन का मानना है कि यह जाति शूद्र थी अर्थाथ वर्ण को जाति भी कहा गया। इससे यह निश्कर्श निकलता है कि "ऋग्वेद में ऐसा कोई विचार नहीं है जिससे यह पता चल सके कि आर्य लोग बाहर से भारत में आए थे।[4] अर्थात् वह यह कहना चाहते थे कि आर्य भारत के ही निवासी थे। उन्होंने वाजसनेयी संहिता के माध्यम से यह सिद्व करने का प्रयास किया कि शूद्र आर्य थे। उन्होंने चार वर्ण की जगह तीन वर्ण को माना और शूद्रों को क्षत्रिय बताया। ऋग्वेद में चार वर्ण थे जबकि शतपथ ब्राह्मण में तीन ही वर्ण रह गए लेकिन पुनः वर्णो की संख्या चार हो गयी। यह चार कैसे हो गयी इसके सम्बंध डॉ0 अम्बेडकर लिखते है कि "ब्राह्मण क्षत्रियों के संघर्ष में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का उपनयन संस्कार करना बंद कर दिया और साथ ही क्षत्रियों का सामाजिक बहिष्कार भी किया। अपनी पूर्व सामाजिक स्थिति से बहिष्कृत होने के कारण क्षत्रियों से जो चतुर्थ वर्ग बना वह पूर्ण शूद्र कहलाया। डॉ0 अम्बेडकर का मानना था कि वेद अध्ययन एवं अध्यापन में सभी वर्णों की भागीदारी थी, जिसका प्रमाण छांदोग्य उपनिशद में उल्लिखित 'जनसूति' की कथा से प्राप्त होती है। ऋग्वेद के दसवें भाग में अधिकांश मंत्रो की रचना करने वाले कवशऐलुश नामक ऋषि तो शूद्र ही थे। जाति एंव वर्ण व्यवस्था संबंधी विषयों के अध्ययन के लिए डॉ0 अम्बेडकर ने तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग करते हुए हिन्दू धर्म पर यह आक्षेप लगाया कि "जिस प्रकार हिन्दू अस्पृश्यों विरोधी है। इसके साथ ही सबसे खराब स्थिति तो यह है कि जहाँ यूरोपीय निष्पक्ष है वही हिन्दू धर्म के सवर्ण अपने पक्षों के हितैशी एवं शूद्रों के प्रति पक्षपाती एवं विरोधी है।[5]

डॉ0 अम्बेडकर हिन्दू धर्म के अन्तर्गत चार वर्ण के बजाय तीन वर्ण एवं तीन वर्ग की अवधारणा में विश्वास रखते थे। ये तीन वर्ण जो कि वरिष्ठता के आधार पर इस प्रकार थी, जो सबसे सर्वोच्च एवं पावन था वह था बाह्मण वर्ण इससे नीचे का वर्ण जो ब्राह्मणों से भिन्न किंतु पावन एवं उच्च था एवं सबसे नीचे का वर्ण जो कि जन्म से ही अछूत एवं निकृष्ट था ऐसा अस्पृष्य वर्ण। इन तीनों वर्णों में ब्राह्मण वर्ण वेद पर अधिकार रखने वाला वर्ग, ब्राह्मणों से भिन्न किंतु उच्च वर्ण षस्त्रों पर अधिकार रखने वाला वर्ग एवं अंतिम वर्ण, पुराणों पर आधारित वर्ग था। इससे इतना तो स्पश्ट हो ही जाता है कि पहले वर्ण एवं वर्ग को निर्धारित किया गया था और उसके बाद वर्ण एवं वर्ग से जुड़े हुए कर्मों का निर्धारण ना कि पहले कर्म एवं उसके बाद कर्म से वर्ण एवं वर्गों को अर्थात् यह निर्धारण जन्म आधारित है ना कि कर्म आधारित।[6]

इसके साथ ही डॉ0 अम्बेडकर एक मुद्दा और भी उठाते हैं अंतरजातीय विवाह निषेध का मुद्दा। डॉ0 अम्बेडकर का कहना था कि वे कौन सी परिस्थितियां थी जिन्होंने अंतरजातीय विवाह पर प्रतिबंध लगाए क्या जातियो ने स्वयं अपनी इच्छा से प्रतिबंध लगाया या फिर उन्हें ऐसा करने के लिए बाध्य किया गया। डॉ0 अम्बेडकर स्वयं इस मुद्दे का जवाब देते हुए कहते है कि कुछ जातियों ने तो स्वयं ही अंतरजातीय विवाह का निषेध कर दिया और कुछ को यह महसूस हुआ कि उन्हें अंतरजातीय विवाह के लिए निषिद्व कर दिया गया है।[7]

वाल्टर बैग हाट के अनुसार दोनों ही स्थितियाँ एक दूसरे से जुडी हुई है अनुकरण की प्रवृत्ति जान बूझ कर उत्पन्न की जाती है या यह अपने इच्छा पर निर्भर है ऐसा कहना ही मिथ्या है। बल्कि वास्तविकता तो यह है कि अनुकरण की प्रवृत्ति कहीं न कहीं हमारे अचेतन मस्तिष्क में स्थित होती हैं और इस अचेतन मस्तिष्क की इच्छाएं जब तक उत्पन्न नहीं होती है तब तक मनुष्य को यह ज्ञात ही नहीं होता है कि हुआ क्या है। यही कारण है कि अनुकरण की प्रवृत्ति के कारण जातियां और संकुचित होती गई।[8]

अनुकरण की प्रवृति से संबधित वास्तिवकता यह भी है कि जिस पक्ष का अनुंकरण किया जा रहा है वह संबंधित समाज में सबसे ज्यादा सम्मानित और प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त करता है और समाज के अन्य लोगों का आपसी संबंध नित्य होता है। उदाहरणस्वरूप ब्राह्मणों का स्थान हिन्दू समाज में सबसे उच्च है और इसी आधार पर उनका समाज से संबंधित अन्य लोगों से नित्य संबंध होता था। डॉ0 अम्बेडकर का मानना था कि यदि वर्ण व्यवस्था आधारित जातिगत सामाजिक–आर्थिक एवं धार्मिक रूढ़ियों के प्रति यदि कोई विरोध ा करता जिससे कि इस शोषण आधारित सम्पूर्ण व्यवस्था के समाप्त होने की आंशका होती तो या अन्य जाति के लोग उस विरोध के अनुगामी बन जाते तो संबंधित जाति से विरोध करने वाले को बहिष्कृत कर दिया जाता था एवं विरोध करने वाले लोगों का समूह एक नए जातिगत समूह में बध कर जातियों की संख्या में बढ़ावा देता था।

डॉ0 अम्बेडकर के अनुसार जाति का मूल श्रद्वा है और ये जातियों अपने से भिन्न जातियों के लिए भले ही संकीर्ण हो लेकिन स्वयं में एक विषेश प्रकार की सांस्कृतिक एकता रखती है।[9] डॉ0 अम्बेडकर के एक अन्य लेख "हिन्दुओं की जाति प्रथा उसे नष्ट करने के उपाय"के द्वारा भी उनके जाति संबंधी विचारों के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। उनका मानना था कि वैदिक ग्रंथों ने हमसे हमारे मानव होने के मूलभूत अधिकार छीन लिए है अतः हमारे विचार का केन्द्र बिन्दु मानव मात्र होना चाहिए एवं उसे उसके मानव अधिकार प्रदान करना हमारी नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए।[10]

डॉ0 अम्बेडकर के पिता कबीर पंथी थे। अपने पिता के प्रभाव स्वरूप डॉ0 अम्बेडकर में बचपन से ही धार्मिक संस्कारों के बीज पड़े ये किंतु उनकी धार्मिकता में रूढ़ियाँ व अंधविश्वास शामिल नहीं था। 1917 में अपने सार्वजनिक जीवन के शुरूआत से 1935 तक वे सदैव हिन्दू धर्म से जुड़ी कुरीतियों को समाप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहे। उनका कहना था कि "यदि कोई धर्म शोषण व असमानता का पक्षधर है तो हम उसका विरोध करते है । यदि हिन्दू धर्म को वास्तव में अस्पृश्यों के कल्याण व समानता का समर्थक है तो उस चातुर्वर्ण्य व्यवस्था को ही जड़ से समाप्त करना होगा न कि केवल मंदिर प्रवेश संबंधी खोखली बातों का समर्थन करना। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था का सिद्वान्त ही सारी असमानताओं की जड़ है। यदि हिन्दू धर्म ने स्वयं में सुधार नहीं किया एवं अस्पृश्यों को उनके मूलभूत अधिकार प्रदान नहीं किए तो अस्पृश्य वर्ग हिन्दू धर्म का अंग नहीं रहेगा।[11]

डॉ0 अम्बेडकर हिन्दू धर्म को न्याय एवं उसकी उपयुक्तता के आधार पर परखते हुए कहते है कि न्याय के अंतगर्त स्वतंत्रता, समानता एवं बंन्धुत्व की भावना शामिल है यदि यह भावना समाज के किसी एक ही वर्ग को प्राप्त है एवं अन्य वर्ग इससे वंचित है तो वहाँ न्याय नहीं स्थापित होगा अर्थात् वहाँ न्याय सभी के लिए उपयोगी नहीं है अतः किसी भी सिद्धान्त या नियम को उसके परिणामों के आधार पर मूल्यांकित करना चाहिए।

डॉ0 अम्बेडकर धर्म के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहते है कि धर्म का आशय है 'धारण करना' धर्म को व्यक्ति के अंदर स्वतंत्रता, समानता एवं बंधुत्व जैसे सद्गुणों के संस्कार विकसित करना चाहिए ना कि वैमन्स्य के संस्कार का विकास। सद्गुणों का विकास ही किसी धर्म का अंतिम एवं एकमात्र उद्देश्य के साथ ही एकमात्र दायित्व भी होना चाहिए।[12]

मनुष्य के लिए धर्म आवश्यक क्यों है यह बताते हुए डॉ0 अम्बेडकर का कहना था कि मनुष्य धर्म के लिए नहीं बना है बल्कि धर्म मनुष्य के लिए बनाया गया है जो धर्म मानव–मानव के मध्य विभेद करता है और वो भी जन्म आध ारित, जो धर्म किसी खास वर्ग को उसके मूलभूत मानव अधि ाकारों जैसे शिक्षा लेने का अधिकार, भौतिक विकास का अधिकार, सार्वजनिक स्थानों के प्रयोग से वंचित रखना यहाँ तक कि स्पर्श न करने देना जैसे अधिकारों को प्रदान नहीं करता है वह धर्म किसी खास वर्ग को सदैव अधिकार विहीन रखने की बात करता है जो धर्म शोषकों को शोषक रहने एवं शोषितों को सदैव शोषित रहने का समर्थन करता हो वह धर्म नहीं बल्कि एक डरावना जंजाल है।[13] डॉ0 अम्बेडकर किसी व्यक्ति के जीवन में धर्म की आवश्यकता क्यों है इसके चार कारण बताते है–

1. किसी भी समाज के सफल संचालन के लिए उसे नियंत्रित एवं स्थिर होना आवश्यक है इसके अभाव में समाज गति में जा सकता है। इससे बचने के लिए धर्म समाज के लिए आवश्यक है।
2. धर्म को तर्क व बुद्धि आधारित होना चाहिए उसी तरह जैसे विज्ञान तर्क व बुद्धि आधारित होता है। तभी धर्म का अस्तित्व संभव है।
3. धर्म को मानव अधिकारों, स्वंतत्रता, समानता एवं बंधुत्व आधारित होना चाहिए ना कि केवल धार्मिक नियमों आधारित एक व्यवस्था।
4. निर्धनता का समर्थन धर्म के द्वारा नहीं होना चाहिए या निर्धनता को परम–पावन व्यवस्था के रूप में प्रस्तुत भी नहीं करना चाहिए।[14]

डॉ0 अम्बेडकर को बौद्ध धर्म ने प्रभावित किया। अन्य धर्मों के प्रति उनकी नाराजगी के अपने कारण थे जैसे– हिन्दू धर्म का वर्ण व्यवस्था के आधार पर समाज का विभाजन इस्लाम धर्म में व्याप्त कट्टरता ईसाई धर्म में रंगभेद और साम्राज्यवादिता के लक्षण डॉ0 अम्बेडकर ऐसे धर्म की खोज में थे जिसमें स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व जैसे मूल्यों का समावेशन हो अतः ये मूल्य उन्हें बौद्ध में दिखाई दिए। तब उन्होंने 'बुद्ध एण्ड हिज धम्मा' नामक ग्रंथ की रचना की बौद्ध धर्म के अध्ययन के क्रम में उन्होंने कुछ निष्कर्ष निकाले जैसे कि – बौद्ध धर्म का संम्बध परलोक से नहीं है। वह न तो स्वर्ग की परिकल्पना करता है न तो नरक की। बौद्ध धर्म व्यक्तिगत मोक्ष की के बारे में नहीं कहता बल्कि सामाजिक मुक्ति के बारे में कहता है। बौद्ध धर्म में परिवर्तनों का खुलकर समर्थन किया गया है। इस धम्म में विकास और विचार दोनों की बात कही गई है।

इन उपर्युक्त विशेषताओं के कारण डॉ0 अम्बेडकर विश्व में प्रचलित अनेक धर्मों की तुलना में बौद्ध धर्म को अधिक मौलिक मानते हैं। उनकी दृष्टि में बौद्ध धर्म अधिक आधुनिकतावादी वैज्ञानिक निष्कर्षों के निकट, वर्तमान कसौटियों पर खरा उतरने वाला है। आधुनिक युग की नवीन चुनौतियों को भी यह स्वीकार कर सकता है क्योंकि इस ध र्म स्वंतत्रता, समानता, बंधुत्तव जैसे मूल्य विद्यमान हैं। ये सभी कमियाँ हिन्दू धर्म में व्याप्त थी। जिनके कारण डॉ0 अम्बेडकर हिन्दू धर्म को छोड़कर बौद्ध धर्म की ओर अग्रसित हुए थे। वे मनुश्य में नैतिकता मूल्य के विकास के लिए धर्म की भूमिका को महत्वपूर्ण मानते थे। मनुष्य के जीवन को धर्म से पृथक करके नहीं देखा जा सकता। उनका कहना था कि व्यक्तिगत जीवन में भी धर्म की भूमिका होती है क्योंकि यह एक प्रभाव या शक्ति के समान है। जो प्रत्येक व्यक्ति की जीन में अनर्निहित होती है। जो कि किसी व्यक्ति के चरित्र निर्माण

में अहम है।[15] डॉ0 अम्बेडकर के विचारों का मूल सामाजिक समानता रही। वे किसी जाति या वर्ण के विरोधी नहीं थे। वे सवर्ण विरोधी नहीं थे बल्कि वे ऐसी सामाजिक व्यवस्था के हिमायती थे। जहाँ मनुष्य –मनुष्य से प्रेम करे समाज में स्वंतत्रता, समानता, बंधुत्व जैसे मूल्य हों।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. सक्सेना, राजेन्द्र : सामाजिक परिवर्तन में डॉ0 अम्बेडकर की भूमिका।
2. फड़के, भालचन्द्र : डॉ0 अम्बेडकर पृ0 सं0 305.
3. डॉ0 अम्बेडकर : हिन्दू जाति व्यवस्था एवं मुक्ति मार्ग पृ0 सं0 14.
4. डॉ0 अम्बेडकर, भीमराव : शूद्र कौन थे पृ0 सं0 53.
5. वही,पृ0 सं0 70.
6. मूकनायक, 27 मार्च 1920.
7. मधु लिमये : अम्बेडकर चितंन पृ0 सं0 68.
8. नवनीत भट्नागर अपराजेय योद्धा : डॉ0 अम्बेडकर एक लेख।
9. डॉ0 सुभे,सूर्यनारायण : डॉ बाबा साहेब अम्बेडकर पृ0 सं0 402.
10. कीर,धनंजय : डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर पृ0 सं0 402.
11. दीघ्र प्रभाकर : महामानव डॉ बाबा साहब अम्बेडकर पृ0 सं0 140.
12. डॉ0 अम्बेडकर , हिन्दुत्व का दर्शन पृ0 सं0 41 – 402.
13. कीर, धनंजय : डॉ0 बाबा साहब अम्बेडकर पृ0 सं0 28.
14. वैध,प्रभाकर : डॉ0 अम्बेडकर आणि त्यांचा धम्म पृ0 सं0 166.
15. मूकनायक, 31 जनवरी 1920.

*****